GOVERNMENT OF INDIA
NATIONAL LIBRARY, CALCUTTA

Class No. H 891.432
Book No. U315p
N. L. 38
MGIPC—S1—19 LNL 62—27 3 63—100,000

GOVERNMENT OF INDIA
NATIONAL LIBRARY
CALCUTTA

This book was taken from the Library on the date last stamped. A late fee of 6 nP. will be charged for each day the book is kept beyond a month.

N. L 44.
MGIPC—S3—8 LNL/63—7-6-63—50,000

प्रार्थना ।

प्यारे पाठक वृन्द !

आप लोग भली भाँति जानते हैं कि मनुष्य की बुद्धि अपूर्ण अथ च भ्रमात्मिका है । ऐसी अवस्था में यदि मेरी बुद्धि अति अपूर्णा और महाभ्रमात्मिका हो तो कोई आश्चर्य का विषय यहा स्थान नहीं है क्योंकि प्रथम तो उस का शरीर विद्या, कविता, प्रतिभा, काव्याङ्गज्ञान, रसालंकारादि बोध, प्रभृति आभूषणों से असज्जित है, दूसरे यह पामर उस जगन्नाटक सूत्राधार विदूषकशिरोमणि की रचना का एक क्षुद्रतम कीट है । फिर यदि मम रचित इस प्रद्युम्नविजय व्यायोग में (जिसको मैंने भाषा कवि चक्र चूड़ामणि भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र गोलोकनिवासी के संस्कृत से अनुवादित धनञ्जयविजय व्यायोग की छाया लेकर निर्मित किया है) महामहा अशुद्धियाँ बड़े २ भ्रम हों तो कोई बिचित्र बात नहीं है, किन्तु आपलोगों सदृश सहृदय और महद् व्यक्तियों को एक ऐसे भ्रमात्मिक क्षुद्रतम कीट की त्रुटि पर यहा अशुद्धिनिचय पर ध्यान देना अथवा उपहाँस करना शिष्टसमाज के सर्वथा विरुद्ध और अन्यायानुमोदित होगा । अतएव आशा है कि आप लोग इस लघु पुस्तिका पर सुधारनेकी दृष्टि रखकर सरल हृदय से इसकी समालोचना करके इसके दोषों के निवारण करने मे उद्युक्त होंगे और इसको एक जगन्मान्य व्यक्ति का लोकोत्तर चरित्र समझ कर आदरसहित ग्रहण और स्वीकार करेंगे ॥

आप लोगों का अनुग्रहप्रार्थी अयोध्यासिंह निज़ामाबाद ।

समर्पण।

प्यारे!

यह वस्तु तुमारी है, क्योंकि इसमें तुमारा और तुमारे प्रिय सुमन काही लोकोत्तर चरित्र वर्णित है, अतएव आशा है कि तुम इसको स्वीकार करने में अणु मात्र भी त्रुटि न करोगे, और ऐसी अवस्था में कोई आवश्यकता नहीं है कि मैं तुमसे इस विषय का अनुरोध करूं कि तुम इसको स्वीकार करके मेरे परिश्रम को सफल करो, पर हाँ! इतना अवश्य वक्तव्य है कि जैसा अपूर्व एवं विलक्षण तुमारा और तुमारे प्रिय पुत्र का लोकोत्तर चरित्र है वैसी इस क्षुद्र ग्रंथ की कविता एवं रचना नहीं है, पर यह विषय ऐसा नहीं कि जिससे आप इसको स्वीकार न करें क्योंकि मैं यह भलीभाँति जानता हूं कि तुमने ऋक्षपति जाम्बवान के किलकिला शब्द सम्मिश्रित सप्रेम निज सुयशवर्णन को भी धैर्य्य के साथ श्रवण कर सादर ग्रहण किया था। यदि मेरा यह कथन सत्य है तो आज मैं अपने को बिना प्रयास कृतार्थ और सफलमनोरथ समझता हूं, और तुमको इस कृपालुता के परिवर्त्तन में अनन्त धन्यबाद प्रदान करणार्थ सोत्साह अग्रसर होता हूं॥

तुमारा परमभक्त

हरिऔध।

ओं श्रीकृष्णसच्चिदानन्दपरमात्मने नमः ॥

श्रीप्रद्युम्नविजय व्यायोग।

(नान्दी मंगल पाठ करता है)

छप्पै।

कर कठोर करवाल गहे कोलाहल करतो ।
कम्पित करत करिन्द ओप पूरितरुग्र करतो ॥
किये अरुन बिवि नैन कंटकित काय कोपयुत ।
कमठ कोल कम्पायमान करि धारि कालदुत ॥
द्रुमि नरक नृपति आगमन को निरखि नदत भामिनि चितै
बर बिहँसन श्रीबलबीर को बहु बिबेक बितरै नितै ॥ १ ॥

(सूत्रधार का प्रवेश)

सूत्र॰--(चारो ओर देख कर) अहा ! आज रंगस्थल की कैसी शोभा है !

जहँ तहँ धरे अनेक दीप जगमगत लखाहीं।
धारि चौगुनो चाव चित्त दरशक उमगाहीं ॥
सकल सुगन्धित द्रव्य गन्ध चहुंदिसि ते आवत।
दरसकगन समुदाय सूंघि जेहि मोद बढ़ावत॥
रन पीछे रनभूमि शब्द बिन है जिमि दरसै ।
तिमि अपार नर सुरेहुं शब्द श्रुति नेक न परसै ॥

(कुछ रुक कर) सत्य है। जो मनुष्य के हृदय में होता है वही प्रायः मुख से निकलता है। यतः आज मेरे हृदय में वीररस का उद्रेक हो रहा है, इसीलिये रंगस्थल के वर्णन में भी रणभूमि का ध्यान बना रहा, कुछ मेरेही हृदय की आज यह गति नहीं है, ज्ञात होता है कि सकल अभिनय कर्त्ताओं का मन वीररस में निमग्न है क्योंकि नान्दी पढ़नेवाले ने भी वीररस काही निरूपण किया है, अच्छा परीक्षार्थ किसी को और बुलाकर देखें तो (नेपथ्य की ओर देख कर)

अखिल कला में निपुन सकल गुनमे सब लायक ।
अभिनयकरन प्रवीन शिष्टजन के सुखदायक ॥
नाटकाङ्ग अरु सकल भेद के एकबिचारी ।
आवहु इतै सबेग बाट हम लखत तिहारी ॥

पारिपा॰—(आकर और सूत्रधार की ओर देख कर)

सकल गुनिनसिरमौर बिबुधजनमंडलिमंडन ।
कलहबैरकुलकाल देसदुखदारिदखण्डन ॥
रसिकबंसअवतंस कलापकुशलगुनवारे ।
सकलकलासम्पन्न धीर धुरधारनहारे ॥
पवनपूत के कोप सम खलगनदानवदलदहन ।
किन करिय उचित अनुसासनहि गुनागार गुनगनगहन॥

सूत्र॰—वाह! क्यों न हो, इस समय तो तुमारे हृदय में

भी बीररस काही संचार हो रहा है। फिर आज बीररस के व्यतीत किसी दूसरे नाटक का खेलना युक्ति संगत नहीं हो सकता, अतएव तुम किसी बीररस के नाटक खेलने का उद्योग करो!

पा०—यह बहुत ठीक है कि जिस कार्य्य में मन का स्वाभाविक सन्निवेस होता है, वही उत्तम होता है, इस लिये मुझको आपकी आज्ञा शिरोधार्य्य है, पर यह बतलाइये कि बीररस का कौन सा नाटक खेलूं॥

सू०—(बिचार कर

किये पान तप तेज सों जिन जलनिधि पल माहिं।
अजहूं लों गावत सुजन जाको सुजस लखाहिं॥
ता कुल में द्विजवर्य्य में काशीनाथ महान।
खुशी और जानकी भे तिनके सुअन प्रधान॥
भये श्रीखुसी के तनै गुरप्रसाद गुरद्याल।
जिनको सुखदायक चरित सुनि सब होत निहाल॥
गुरदयाल के तीन सुत भये बिप्रकुलसिंह।
जोधासिंह अरु धरमसिंह श्रीयुत सेनीसिंह॥
श्रीयुत सेनीसिंह के भये बिदित द्वय तात।
श्रीयुत लछमनसिंह अरु श्रीरनजीत सुख्यात॥
तृतिय भये श्रीबिबुधवर रामचरण द्विजराइ।
तीन सुअन तिनके भये सकल सुगुन समुदाइ॥

प्रथम श्रीलश्रीब्रह्महरि विबुधवंससिरमौर ।
ज्योतिर्विद्या में न जिन लही हार कोउ ठौर ॥
द्वतिय विप्र श्रीविष्णुहरि कुशलकाव्य गुनखान ।
द्वितिय श्रील शिवहरि विदित जाको सुगुन जहान ॥
ता सुत ने हरिकृष्ण को अग्रज श्रीहरि औध ।
रच्यो बिसद व्यायोग जो करहु सोई करि औध * ॥

पा०—कौन हरिऔध ? जिनका वास्तविक नाम पंडित अयोध्यासिंह है ?

सू०—हाँ ।

पारि०—उन्होंने तो कई नाटक बनाये हैं, कौन सा खेलें ।

सूत्र०—श्रीप्रद्युम्नविजय ।

पारि०—तो क्या उसीके खेलनेकी मुझको आज्ञा होती है?

सूत्र०—हां । उसी के ।

पारि०—जो आज्ञा ।

(आता है)

---

* रणजीत प्रसिद्ध नाम धुवी उपाध्याय, ब्रह्महरि वास्तव नाम पं० ब्रह्मासिंह, विष्णुहरि वास्तव नाम विष्णुसिंह वा पं० बनारसीसिंह, शिवहरि वास्तव नाम पं० भोलासिंह ग्रंथकर्त्ता के पिता । हरिकृष्ण वास्तव नाम कृष्णसिंह वा गुरसेवकसिंह ग्रन्थकर्त्ता का कनिष्ठ भ्रता ।

(नेपथ्य में)

अतिप्रबल ,कोपित बृहतकाय महान भट गरबित घने। धर मार करत पुकार कवच कृपान कसि बहुबिध बने॥ इमि साठ सहस निकुंभप्रेरित असुर आवत हेरि कै। सो धन्य अरजुन बीर जो रज कियो सर सों टेरि कै॥

सूत्र०—(सुनकर और नेपथ्य की ओर देखकर)—

स्यामगात कर धनु गहे उपजावत हिय चैन ।
यह आवत प्रद्युम्न बनि बीरभद्र सुखदैन ॥

तो, अब मैं भी चलूं और पात्रों को उचित सहायता प्रदान में दत्तचित्त होऊं।

(जाता है)

॥ इति प्रस्तावना ॥

(रथ पर चढ़े सारथी सहित कुमार प्रद्युम्न का प्रवेश)

प्रद्यु०—(कोप से)

जद्दपि माया बिरचि जनकनिदेस तैं मैं बस कियो। द्विज पञ्चसत कन्यान रच्छि उबार मुनिजन को लियो॥ बस करी माया जाहि कोउ दानव निकुम्भहुं नहिं लह्यो। पै भयो यह सब कहा जो नहिं नृपन पावन फल चह्यो॥

सा०—महाराज ! आपके लिये यह क्या बड़ी बात है ।

जबलौं कर मैं धनुष धारि नहिं.रोस बढ़ावत ।
जबलौं सरझर लाइ गगन महि नांहिं मिलावत ॥
जबलौं करि घमसान सामुहें ह्वै नहिं गाजत ।
तबलौंहीं भट कोरि नांहिं नरनाथन भाजत ॥

प्रद्यु०—अहा ! निकुंभ ने भी कैसी धृष्टता की है ।

जिनैं जहान की जवान आइ सीस नावहीं ।
महेस सेस जा अपार पार को न पांवहीं ॥
कराल काल जो मुरारि तासु तात मात को ।
कियो प्रबञ्च ना कियो बिचार एक बात को ॥

यदि यहीं तक होता तो इतनी चिन्ता न थी, पर—

जिन विप्रन को पूजि सदा हम सीस नवावैं ।
जिन विप्रनपग परसि जगत सुन्दर जस पावैं ॥
जिन विप्रन को सेइ करैं पूरन मनकामा ।
हर्‌यो तासु कन्याहु हाय ! सो औगुनधामा ।

सा०—सत्य है, किन्तु निकुंभ से बढ़कर तो राजाओं ने धृष्टता की है –

करिकै निरादर विप्रकुल को लाज सिगरी खोय ।
जदुबंस सों रन करन आये और दानव होय ॥

हलपानि औ बलबीर को नहिं कियो रच्छक सङ्ग।
ए सकल भूपति छत्रिबंसनि सीस कैर कलङ्क ॥

प्र०—तो क्या हुआ।

हम द्विज सकल दुहितान लीन उबारि ज्यों प्रथमै कहे। पित, मात पितहिं छुड़ाइ लीने लखत सब लोगहिं रहे ॥ ब्रह्मास्त्र तजिकै साठ सहस सुरारि नहिं अर्जुन रहे। अब रहे सकल नरेस तिनहूं को लखब जो हरि चहे।

(नेपथ्य में)

अनाधृष्ट अक्रूर निसठ उल्मुक कृतबर्मा ।
उद्धव गदवैहरन आर्च्चि भोजक धृतबर्मा ॥
सनतकुमारादिक प्रवीर करि घोर लराई ।
बाँधि कैद करि लियो निकुम्भ निसाचरराई ॥

तिमि सकल जादवी सैन को बान मारि बिचलित कियो। अब हम सुरारि मिलि ताहिं सों लरन काज मन है दियो ॥

पै आवत नृपदल सकल करन सहाय सुरारि ।
बढ़ि आगे रन ठानि कै देहु तात मद टारि ॥

(दोनों जन कान लगाकर सुनते हैं)

सा०—कुमार! यह संग्रामार्थ किसका वाक्य किसके प्रति है?

प्रद्यु० - हमारे पूज्यचरण पितृव्य बलरामजी का, हमारे प्रति। तुम रथ को आगे बढ़ाओ ? ।

सा० —जो आज्ञा (रथ हाँकना नाट्य करता है)

प्रद्यु० –(रथ की ओर देखकर)

लीक न लखात तिमि बेग बिलगात नांही तीर सौं कढ़त किङ्किनीन सोर भरि कै। बाजि गति धुज फहरान त्यों फिरन पहियान को न ज्ञान होत लखि ध्यान धरि कै ॥ हरिऔध दा- मिनी समान गति दरसाति बड़ो बेगवारो बायु बड़ो बेग करि कै। पहुँचत पास पर पावत न जान आगे पारि देत पीछूं मानो पौन को प- करि कै ॥

(नेपथ्य की ओर देखकर)

मेरे पूज्यपाद पितृव्य! आप चिन्ता न करें क्योंकि—

जबलौं कसि तन त्रान सकल आयुधन सँभारी।
तुरग धवाइ बढ़ाइ जान करि कोप प्रचारी ॥

नृपदल जदुकुल सैन सौंह आवन मन दैहै ।
तबलौंहीं तव कृपा दास तिनको गहि लैहै ॥

(नेपथ्य में)

तुम सब योग्य हो !

सा०—राजकुमार! अब हमारा रथ नृपदल के अति निकट आ गया ! क्योंकि—

जदपि उड़ी रज ते छपी नृपन-सैन दरसात ।
तदपि कृपानरु कवच को चिलक कौंधसी जात ॥
सिंदुर संख हयादि रव मिलित सुनत है जौन ।
बिचरत श्रुतिपथ बिलग ह्वै बिबिधिरूप धरि तौन॥
द्विप पदाति अरु बाजिगन दीसत है इकतार ।
पै अब पृथक लखात सब दिये दृष्टि इकबार ॥

प्रद्यु०—ठीक है ! यह सामने राजाओं की सेना दीख रही है—

कोऊ कसि कवच कृपान करि कोप ठाढ़ो कोऊ करि लिये करवाल बरकत है । कोऊ किये अरुन नयन खरो गरबात कोऊ चोप चौगुनो चपारि करतत है ॥ हरिऔध कोऊ कान

करत न कोटिन की कोउ चौंकि प्रकात जु पात
खरकत है। कोउ तेह ताप ते तरकि अति तर-
पत कोउ सोर सूरन सुनत सरकत है ॥

अहा! राजाओं के दल की भी कैसी छटा है!

जहँ तहँ जुरे अनेक वीर भरि जोम बिराजैं ।
हय हींसहिं चिक्करहिं दुरद दुन्दुभिगन गाजैं ॥
नृपन-छत्र की चमक चहूँकित ओप पसारैं ।
कुन्त कुलिस करवाल चिलकि दामिनि मद गारैं।
फहरहिं पताकि धुज बायुबस ढुरहिं चमर गर-
जहिं सुभट। बहुभांति बिबिधि रन बाद्य बजि
करहिं बीररंस को प्रगट ॥

(बिचार से सेना की ओर देखकर)

बहरावत निज व्यूह चित्त को चोप चढ़ावत ।
उपजावत हिय त्रास कायरन, रोम बढ़ावत ॥
फहरावत धुजवृन्द बिटप गिरि भूमि कँपावत ।
लखो सकल नृपसैन बायु निदरत इत धावत ॥

सा०—कुमार! सत्य है! राजाओं की सेना बड़े वेग से इसी ओर आ रही है, क्योंकि—

उड़िबौ रज जो थो हुतो छपी हुती जेहि सैन।
पै अब पसरि दिगन्त लौं कियौ धूसरित गैन ॥
जलनिधि लौं तकि कूलको रुको हुतो दल जौन।
तरल तरङ्गिनितोय सम चञ्चल लखियत तौन ॥

प्रद्यु०--सारथी! इसमें संदेह नहीं कि यह दल बड़े बड़े बीरों से संगठित है, और दृढ़ विश्वास है कि यदि कोई विश्वविजयी बीर इस समय इसको देखे तो एक बार वह भी दहल जावेगा, तथापि—

जो जगदीस दया करिहै हरिऔध जू औ बिधि बाम न दैहै। जो यह तुच्छ अयोधन मैं लरि हाय्यो न आजलौं काहु सों ह्वैहै॥ जो जदुबीर को तात कहावत औ जदुबंस जन्यो जस लैहै। बात लौं मेरो बगारिबो बान को तो तिन को तिनका सम कैहै॥

(भुज का फरकना देखकर)

जिन भूषन तजि सदा बान धनु धारन कीने।
जिन बीरन को मान मोचि बिन पति करि दीने॥
जिन अपने बल जगत मांहि सुन्दर जस छायो।
सावधान! नृप सकल! सोई मम भुज फरकायो॥

सा०—कुमार। आपके कथन से ज्ञात होता है कि इस सेना में बड़े बड़े सूरमें बिराजमान हैं, अतएव यदि आप को कुछ कष्ट न हो तो मैं उनमे से प्रत्येक का नाम बल और प्रताप जानना चाहता हूं॥

प्रद्यु०—बहुत अच्छा, तुम ध्यान लगा कर देखते और सुनते जाओ मैं एक एक बात बर्णन करता हूं।

सा०—जैसी कुमार की आज्ञा!

प्र०—(क्रोधसहित साम्हने देख कर) सूत! देखो!

जासु धुजा मैं उरगचिन्ह निर्मित दरसावै।
जाको रथ चंचल तुरङ्ग जेहि अरुन लखावै॥
सकल कुटिलताखान पाण्डवनको रिपु जोई।
यह अभिमुख दरसात नीच दुर्योधन सोई॥

सा०—क्या यही दुर्योधन है? इसके लिये आपने नीच पद का प्रयोग बहुत उत्तम किया। क्योंकि

द्रुपदी निजकुलवधू को सभा बीच तजि लाज।
चह्यो नगन करिबो कवन नीच ताहि सम आज॥

प्र०—अहा! यह देखो!

लखत पाण्डवन सभा बीच जिन अजगुत कीनो।
द्रुपदसुतापट आकरषन मैं चंति मन दीनो॥

कुरुपति दुर्य्योधन अपर बंधु मातुल सँग लैकै ।
यह दुश्शासन खरो सैन निरखत मन दैकै ॥
सा० - और उसके बाम भाग में कौन कौन महाशय हैं !
प्रद्यु० — ए बड़े सच्चरित्र लोग हैं !
जाके मुख की कान्ति बाल रविकी छबि छोरत।
प्रभा फैलि चहुं पास जासु गुन गन जनु जोरत॥
जाको तेज अपार 'बीररस मुनितनुधारी ।
जनु सोहत, सोई कृपाचार्य्य कुरुगुरु सुखकारी ॥
और भी ।
जाके सिर पै जटाजूट सोहत मनहारी ।
तेजपुंज तपपुंज युद्धकोबिद अरिदारी ॥
घनदामिनि ज्यों शान्त मांहि बीरता बिराजै ।
अस्त्रनिपुन यह लखो द्रोण आचारज राजै ॥
सा० और कथित दोनों महाशयों के समीप कौन खड़ा है?
प्र० — (प्रसन्नता से)
तेजपुंज जो कछु मम पौरुष समता को है ।
परमधनुर्धर धीर बीर नवबय गुनमै है ॥
धरे मुनिबसन मुनिसरूप हिय हर्ष बढ़ावत ।
रनबांको अश्वत्थामा यह सोह सुहावत ॥

सा०—अहा ! अश्वत्थामा का भी कैसा तेज है !

प्र०—सारथी ! इधर देखो !

रुक्म बिदूरथ जरासुत दन्तवक्र सिसुपाल ।
साल्वसहित कुरुराज अनु राजत भट महिपाल॥

सा०—कुमार ! प्रत्येक का परिचय मैं पृथक् २ चाहता हूं।

प्र०—अच्छा देखो ।

लिये हाथ में बान को जौन फेरै ।
कबौं वेग बाजी कबौं सैन हेरै ॥
महारोसवारो हठी ख्यात जोई ।
मेरी मात को भ्रात है रुक्म सोई ॥

गर्बित ह्वै गरजत गहकि दरसत अमित असंक।
बारबार बहकत बकत सोई बिदूरथ बंक ॥

अति प्रचण्ड भुजदण्ड जासु बीरता बढ़ावत ।
कारकुबण्ड को धारि बान बरिवण्ड चढ़ावत ॥
खण्डखण्ड ह्वै कवच गिर्‌यो महिमण्डल जाको।
अति अखण्ड बलबीर जरासुत है रनबांको ॥

अंगन की गनती कहा जासु बक्र प्रति लोम ।
पै बिसेस कछु दसन सोइ, दन्तवक्र बल तोम ॥

धरे असित परिधान असित बाजी रथ जोरे।
किये बान सन्धान बीररस मैं मन बोरे ॥
बरकत अति गरबाय बैन उचरत मन साने।
सोइ उद्धृत सिसुपाल जासु युग दृग मदसाने ॥
जो बांको बिकसित लसत बहुतक करत प्रलाप।
भुज ऐंठत रदपुट दँसत सोय साल्वयुत दाप ॥

सा०—आयुष्मन्! इन लोगों का पराक्रम रुक्मिणीहरण में प्रगट हो चुका है, आप शेष लोगों का वर्णन करें।

प्र०—तनिक तुम इन लोगों की ओर दृष्टिपात करो। ए दस राजे कुरुराज के आगे कैसे शोभायमान हैं।

बिबि तून युग करवाल कटि मैं कसे जो दरसात है। सो धृष्टद्युम्न महानभट जेहि ओप अमित लखात है ॥ सित केस सित परिधान सित हय जासु रथमैं सोहहीं। सो जयद्रथ अति वृद्ध जा कहँ सकल सेनप जोहहीं ॥ मध्यम बयस तिमि मध्य जाको सकल साज जनावई। पारथप्रिया प्रियजनक सो जेहि द्रुपद नाम कहावई ॥ जुग कन्धं पै जुग धनुष जाके सो बि-

राट नरेश है। कर जासु शक्ति विचित्र राजत सोनुबिन्दु सुबेस है॥ उत्तरनृपति सो बसन जाको सकल हरित जनात है। रथ सकल जाको लौह बिरचित सो सुसरमा ख्यात है॥ हय-चार षट-ध्वज जासु रथ में लगे सो नृप नील है। अति चपल हय रथ सारथी जेहि विन्ट सो बिन सील है॥ सितबरन बृहतबपुष सुबारन पै चढ़ो जु बिराजई। भगदत्त नाम नरेस सो घन स-रिस अनुछिन गाजई॥

सा॰—इन लोगों के बीच कौन महाशय हैं?

प्र॰—(प्रेमपूर्वक देख कर)

सत्यसन्ध दृढ़ब्रत प्रबीरबर बिरदबिचारी।
बिजयी बिश्व त्रिबार भृगुप को दरपबिदारी॥
जासु धुजा को तार चिन्ह बरता बिलगावै।
यह भीषम भवबिदित जासु जस भुवजन भावै॥

सा॰—निःसन्देह! इनका ऐसाही यश है।

(नेपथ्य में)

घनमे दिनप समान सघन बनमें सम पावक।
अमित-पक्ष-संकुलित समरभूमे सम नावक॥

अविरल पादप वृन्द बीच मारुत सम धावत ।
को यह जो नृप अमित सैन बिच निधरक आवत

अहा ! यह तो कुमार प्रद्युम्न हैं ! क्योंकि ।

जिमि हमरो यह सकल बपुष कंटकित जनावै
तातें अधिक कुमार कायरन मांहि लखावै ॥
गहिकै जिमि जलधार सुऊपर हम चलि जाहीं।
बानधार गहि जिमि हरिसुत दलमाहि समाहीं॥
जिमि हम चंचलजल अगम मैं तिमि कुमार
गतिरुन करत । यह भाव जनावत जगत को
मीनचिन्ह धुज फरहरत ॥

सा०—आयुष्मन् ! महात्मा भीष्म कैसी इर्षारहित वाणी से भवदीय पराक्रम का प्रदर्शन कर रहे हैं ।

प्र०—यह ऐसेही सत्यसील और निष्पक्ष महानुभाव हैं ।

(पुनः नेपथ्य में)

गहो अस्त्र को द्रोन औ रोस धारो ।
कृपाचार्य्य लै बान को बेग भारो ॥
धरे द्रोन को तात जो वीरता है ।
तो को दण्ड लै सामुहैं युद्ध चाहै ॥

कहां कर्ण है जो हुतो बीर बांको ।
न मान्यो कही मैं लखों युद्ध वाको ॥
खरो अन्ध को पूत तू काहि हेरै ।
गदा धारि क्यों बैरि को नाहि टेरै ॥
बिकर्ण रुक्म साल्व दन्तवक्र बिन्द आदि लै ।
खरो कहा सबै बली अबै बढ़ो गदादि लै ॥
गहे सुचाप स्यामगात क्रीट कौच को धरे ।
कसे कृपान लंक है निषंग बान सों भरे ॥
दिखात नाहि यान जाहि को लखात धूर है ।
मुरारितात सौंह आवतो भरो गरूर है ॥

सा०—कुमार! बीराग्रगण्य महात्मा भीष्म के बीरताजनक वाक्यों में 'न मान्यो कही', इस वाक्य का भाव मुझ को नहीं ज्ञात हुआ ॥

प्रद्यु०—जब यज्ञकाल में ब्रह्मदत्त व निमंत्रित पितामह वसुदेव को निकुंभ ने इस प्रकार धमकाया कि यदि यज्ञ में मुझको भाग न दोगे तो मैं तुम लोगों को बांध लूंगा और द्विज यज्ञकर्ता को ब्रह्मदत्त की पांच सत कन्याओं को भी हर लूंगा, तब भयभीत होकर ब्रह्मदत्त ने दानवराज से तो यह कहा कि मैं आप

की बातों का उत्तर कुछ काल में समझ कर दूंगा, और उसी समय, भारतवर्षीय समस्त राजाओं के पास निमंत्रणपत्र यज्ञ मिससे इस बिचार से भेज दिया कि यदि वे लोग यज्ञ में आ रहेंगे तो जिस काल कोई संकट उपस्थित होगा मेरी रक्षा करेंगे। यह निमंत्रण पत्र दुर्योधन के यहां भी गया था॥

सा०—सो भी मैं जानता हूं, महात्मा नारद ने द्वारिका में जाकर जब द्विजराज ब्रह्मदत्त और सश्लोक मान्य वसुदेव जी के बांधे जाने का समाचार कहा था तो यह बात भी कही थी॥

प्रद्यु०—किन्तु जब निमंत्रणानुसार यात्रा के लिये सुयोधन ने सभा में परामर्श लिया, तो भीष्मपितामह ने यात्रा विषय में अरुचि प्रगट की, और कहा, कि इतने काल में निकुंभ ने ब्रह्मदत्तादिकों को अवश्य बांध लिया होगा, क्योंकि महात्मा ब्रह्मदत्त के निमंत्रण पत्र के शब्दों से यह भाव स्पष्ट हृदयंगम होता है। ऐसी अवस्था में अवश्य है कि भगवान श्रीकृष्ण अपने पूज्य पिता के उद्धार और ब्राह्मण यज्ञ को निर्विघ्न समाप्ति की कामना से वहां आ चुके होंगे। अमोघपराक्रम भगवान श्रीकृष्ण का जैसा आतंक है प्रगट है, अतएव निकुंभ का हृदय भी इस काल चंचल होगा,

हमलोगों के वहां पहुंचने पर निकुंभ अवश्य सहायता का प्रार्थी होगा, जिसका यह फल होगा कि व्यर्थ हम लोगों को श्रीकृष्ण के साथ युद्ध और शत्रुता करनी होगी। कर्ण ने इस उत्तम परामर्श का बिरोध किया, और उसी की उत्तेजना से दुर्योधन को यहां आने का साहस हुआ और यही कारण है जो महातेजा भीष्म ने अपने उत्तेजक वाक्यों में 'न मान्यो कही', इस वाक्य का भी प्रयोग किया॥

सा०—किन्तु ठीक वैसाही हुआ, जैसा महात्मा भीष्म ने कहा था॥

प्र०—दूरदर्शीजनों का कथन असत्य कब हुआ है?

(नेपथ्य में)

अहो कृष्णसुत के सरिस अपर सुभट जग कौन।
सहसन महारथीन पै जात एकलो जौन॥

(दोनों सुनते हैं)

सा०—कुमार! आकाशबाणी समान यह वाक्य किसका है?

प्र०—आकाशबाणी समान क्या? यह वास्तविक आकाशबाणी है, क्योंकि देवताओं की बाणी है।

(इन्द्र, प्रवर, और जयन्त का प्रवेश)

प्रव०—देव! कुमार प्रद्युम्न केवल सुन्दरही नहीं किन्तु बड़े प्रतापशाली भी हैं, क्योंकि—

यदपि शत्रुदल के सुभट धरे धनुष बर बान ।
तदपि पनच को करषि के सकत न नेकहु तान॥

इन्द्र – निःसन्देह !

(नेपथ्य में)

अरे कुमार प्रद्युम्न ! तू चापलूस देवताओं की झूठी प्रशंसा को क्या मन लगाकर सुन रहा है, यदि कुछ पौरुष रखता है तो सामने आ।

यदपि हमारे इष्टदेव के तुम प्रिय जाये ।
यदपि विश्वविजयी प्रबीर तुमको सब गाये॥
यदपि तुमारो बैन बीन बल पूरित दरसै ।
यदपि हमारो वृद्ध बैस बल जाहि न परसै ॥
पै तदपि समर भूमैं तुमैं सौंह पाइ करि प्रन
कहत । वह चोप डारिहौं चूरि सब अरि जासों
जीतन चहत ॥

प्र० – (सुनकर क्रोध से) सारथी ! तुम हमारे रथ को शीघ्र भीष्मपितामह के सम्मुख ले चलो।

जीति जगत्त्रयबार अरु भृगुपतिको मद जौन।
चढ़ो नदीसुत को अहै मैं निवारिहौं तौन ॥

सा० – जैसी आज्ञा (रथ लेकर आता है)

प्रवर – देव ! देखिये ! कुमार प्रद्युम्न के रणभूमि में पहुंचते ही शत्रुदल में कैसा खलबल मच गया है ।

कोउ कंपत कोऊ गिरत कोउ संकित दरसात।
अस्त्र शस्त्र तजि कोउ भजो चाहत पै रहिजात॥

अयं० – अहा ! महात्मा भीष्म के पुरुषार्थ को धन्य है जो इस हृद्धावस्था में भी ऐसा अपूर्व है !

यदपि सकल अनीक मैं हरिसुत निरखि खलबल मच्यो । पै तदपि नहिं रंचक चप्यो अरु तेह ते चौगुन तच्यो ॥ अब कान लगि धनु तानि पल मैं सहस बान प्रहारि कै । गरजत खरो घन सरिस मानहु बैरि बेग बिदारि कै ॥

इन्द्र । पुत्र ! देखो ! महात्मा भीष्म के इस उत्तम साहसका कैसा फल हुआ है ।

जो सैनप चित चके बीर जो थकित खरे हैं ।
जो भट कादरताऽरु बीरता बीच परे हैं ॥
जो दल संकित हुतो सूर जो सहमित हो अति।
सो अब तरपत तेह पूरि रनधारि दुगुन गति ॥

प्रवर – देवेश ! तनिक कुमार प्रद्युम्न के साहस को देखिये ।

पल में नदीसुत हनित बानन काटि कै रज सम कियो। पैनि मारिकै बिबि सहस सर रथ सुरसरिज को भरि दियो ॥ एहि भाँति धनु गहि तजत सर यह जाहि ते न जनात है। कब धरत धनु पै बिसिष अरु कब करत अरि पै घात है ॥

जय०—देव! साथही महात्मा भीष्म के पराक्रम पर भी दृष्टिपात कीजिये।

हरिसुतप्रेरित सरन को निज बानन सों काटि।
पार्वकसर तजिकै करत महानाद अरि डांटि॥

इन्द्र० ठीक है! क्योंकि—

करत मलिन निज धूमधार सों गगनदिसा को।
अरुन बनावत दिवसनाथद्युति हरन निसा को॥
बेलि लता पादप खग मृग बहु जीव जरावत।
ज्वालमालसंकुलित अग्नि यह दहकत आवत॥

प्रव०—क्या हुआ, कुमार का वारुणास्त्र चल चुका।

घन घहरत चहुंओर घोर पल में घिरि आये।
उमड़ि२ तिमि घुमड़ि छहरि छितिमंडल छाये॥

बरसि मूसलाधार प्रलयकौतुक दरसाई ।
लगी महान दवारि दियो छन माँहि बुझाई ॥

अर्थ०—महोदय ! महात्मा भीष्म ने अब वायव्यास्त्र छोड़ा है ।

महाकाय नीलाद्रि लौं जौन धारैं ।
बड़े वृक्ष को मूल सों जो उखारैं ॥
बड़ो सुण्ड औ दन्त जाके डरावैं ।
घिरे घूमते सो लखो सौंह आवैं ।

प्रव —सत्य है ! किन्तु कुमार ने जो मृगराजास्त्र छोड़ा है उसका कौतुक अवलोकन कीजिये ।

पटकि पूंछ तिन तरपि तोपि करि गन को लीनो । प्रखरदन्त नख बल बिड़ारि तिनको दल दीनो ॥ कर प्रहार कटि फारि कुंभ नख सों पल माहीं । सकल दन्ति दलि भये लोप अब नहिं दरसाहीं ॥

इन्द्र —अहा ! यह क्या हुआ !

दल्यो जिते हुते सपच्छ अद्रि ता सुपच्छ को ।
तउ लखो समच्छ आवतो समूह लच्छ को ॥
किधौं भयो सपच्छ सैल बंस है नयो कोऊ ।
किधौं अहै कोऊ उपाध पै अनात ना सोऊ ॥

जयं०— मेरे पूज्यपाद ! यह सुरसरीनन्दन का छोड़ा हुआ पर्वतास्त्र है जिससे अब कुमार प्रद्युम्न का बचना कठिन जान पड़ता है ।

प्रव० – आयुष्मन् ! यह देखिये ! प्रद्युम्न ने भी साथही पुरहूतास्त्र छोड़ा है ।

गहे कुलिश कर भरे कोप कुण्डल श्रुति धारे ।
प्रगट भये बहु इन्द्र ओप चहुंओर पसारे ॥
जिनके कुलिशप्रहारन सों सिगरे गिरि गाढ़े ।
ह्वै अपच्छ चकचूर भये जिमि हे बहु बाढ़े ॥

जयं० – (साम्हने देख कर)

महाभयंकर रूप बिकट टेढ़े अति कारे ।
खोलि सघन रु निबिड़ केस सब दन्त निकारे ॥
कटकटात चिक्करत बमत निजमुख ते ज्वाला ।
यह पिशाच को जूह लखो आवत गहि भाला ॥

इन्द्र – ठीक है ! सत्तनसुवन ने पिशाचास्त्र छोड़ा है ।

प्रव० —देव ! देखिये !

भैरवास्त्र जो तज्यो कुंवर तासों छन माहीं ।
स्वान चढ़े प्रगटे अनन्त भैरव तिन पाहीं ॥

तिनैं निरखि सिगरे पिशाच झुकि सीस नवाये
और परसि पग ह्वै प्रलोप निज धाम सिधाये॥

इन्द्र॰ अब क्या भीष्मपितामह ने पन्नगास्त्र का प्रहार किया है, जो अचांचक इतने सर्पों का समूह फुंकारता हुआ सम्मुख चला आता है?

जयं॰ हां! ज्ञात तो ऐसाही होता है।

कुछ निसा सम मलिन और कारे दरसाहीं।
कुटिलवक्र अस जाहि निरखि कच नारि लजाहीं
उगिलत गरल अपार फुंकारत फन फहरावत।
यह अहिकुल हियमाहिं त्रास चैगुन उपजावत॥

प्रव॰-- देव! कुमार प्रद्युम्न की कैसी अपूर्व लाघवता है कि पन्नगास्त्र के साथही गरुड़ास्त्र भी छूटा है।

बान बगारत बेर भई नहीं पच्छ प्रहारत औ मुंह बाये। भू नभ औ दसहू दिसि मैं हरिऔध घने उरगारि दिखाये॥ देखि भुजंग सबै घबराय भजे पर एक न भाजन पाये। पन्नग जेते हुते प्रगटे तिनको पल मैं गहि कै तिन खाये॥

इन्द्र॰ प्रवर! देखो!

जीवे जरावत थरहरत उपजावत अति त्रास ।
तज्यो नदीसुत ब्रह्मसर करन चहत जग नास ॥

प्रव० अहा !

तजत ब्रह्मसर के भयो तुरत ब्रह्मसिर पात ।
अब कुमार सर तजि कियो रथसारथी निपात॥

जय० — ओहो ! यह क्या हुआ ।

भग्न जान लखि अपर यान कुरुपति पठवायो ।
बान मारि ताको कुमार पथ मांहि उड़ायो ॥
कोपित ह्वै मर हन्यो भीष्म जो सो रज कीनो ।
मायाफांसी डारि बांधि तिनको अब लीनो ॥

प्रव० – धन्य ! कुमार प्रद्युम्न धन्य !! ऐसा अपूर्व पराक्रम तुमारे अतिरिक्त किसका हो सकता है ।

सकल दिव्य उपअस्त्र को अपने बल सों टारि ।
भीष्म सरिस बांध्यो सुभट मायाफांसी डारि ॥

इन्द्र० – अरे तुम सब क्या देखते हो, इस विचित्रता को अवलोकन करो ।

तमसावृत औंड़ी अमित माया गुहा बनाय ।
तामे भीषम को धक्यौ लखत नृपन समुदाय ॥

प्रव० -- देव ! उससे अधिक विचित्रता देखिये !

अश्वत्थामा द्रोन कृप ये महारथी साथ ।
धावत हुक हरिसुअन पै गहि चाप सर हाथ ॥

इन्द्र०—क्या हुआ, कृपासुत इन तीनों के लिये अकेलाही बहुत है।

प्रव०—इन तीनों के लिये क्या, यह कहिये कि जितने राजे उपस्थित हैं उन सब के लिये।

अयं०—महात्मन्! देखिये!

रवि ते किरिन अरु घनपटल ते बूंद ज्यों निकरहिं घने। तिमि द्रोन कृप अरु द्रोनसुत धनु ते निकरि सायक अने ॥ रथ तोपि हरिसुत को लियो पै काटि सर इमि सो कढ़े। जिमि निविड़ बारिद को बिदारि कढ़त् दिवाकर दिन चढ़े ॥

इन्द्र—अहा! क्यों न हो।

कढ़त बेर नहिं भई द्रोन सर अयुत चलाये।
वै सहस्र सर रथ सारथि हय को कृप घाये ॥
सप्त सहस सायक अश्वत्थामा बढ़ि मास्यो।
पै कुमार इक इक सर पै द्वै द्वै सर भास्यो ॥

आतै उनकी सर पलटि कै उनहीं पै धावत भये।
है अवस आपनेही सरन असि निकासि तीनौं हये

प्रव० — देव ! कुमार ने दो दो बाण मार कर केवल उन लोगों के बाणही को नहीं फेर दिया, बरन यह ला-घवता भी की।

लगेहुते सर काढ़न मैं जबहीं वह तीनो।
तब कुमार इक रवि औ है पावक सर लीनो॥
छाड़िदियो तकि सौंह तुरतसो अरिदिसचाह्यो
रथ सारथि हय कवच तून तीनो को दाह्यो॥

जयं० - महोदय ! अब देखिये !

गहे कृपान चर्म्म अग्र द्रोन तात धावतो।
त्रिसूल धारि द्रोन तासु पृष्ट ओप छावतो॥
लिये कृपास्त्र चक्र तानु तेह सौं फिरावतो।
कुमार पै कमाल कोप सों लखाहिं आवतो॥

प्रव० - सत्य है ! किन्तु

हनि बिसिख है हरिसुत चरम असि द्रोन सुत को दलि दियो। निज उग्र सक्ति प्रहारि द्रोन त्रिसूल को खंण्डित कियो॥ कृपचक्र को

निज चक्र सों चक्रचूर कै अति चोप सों । गल डारि मायाफांस तिनको बांधि लीनो चोप सों ॥

इन्द्र - भद्र ! कुमार ने केवल बांधही नहीं लिया वरन –

कथित कापट कंदरा मैं तिनैं कैदहू कीन ।
अरुरच्छक निजसुतहिं करि जगतमांहिं जसलीन

प्रव० (सामने देख कर) देव ! इनको क्या सूझी है, जो इतनी दृढ़ता से चले आते हैं।

इन्द्र – किनको ? दुर्योधन को !

प्रवर - हां।

इन्द्र – सूझी क्या है ! "जेहि मारुत गिरि मेरु उड़ांहीं, कहहु तूल केहि लेखे मांहीं," पर नहीं सुना है कि 'बिनाशकाले,बिपरीतबुद्धिः, ।

प्रवर – आपका कथन बहुत ठीक है, और सोई हुआ भी।

जब लौं धनु धार्‌यो अरु सर मार्‌यो दस औ सत कुरुराई। तब लौं ही डांटी बानन काटी करि लघुता समुहाई॥ रथसूत बिनार्‌यो ध्वज धनु नार्‌यो सकल अस्त्र दलि डार्‌यो। हरिसुत बलधारी ताहि प्रचारी अरु है बान प्रहार्‌यो॥

रथ सारथी बिनास ते आकुल ह्वै सर खाय ।
गिर्‌यो सुयोधन धरा पै मुरछिं महादुख पाय ॥

जयं०—महाशय ! इस कौतुक को अवलोकन कीजिये !

मुरछित कुरुपति निरखि सुल्य रथ चढ़ि द्रुत आयो । अरु चढ़ाय रथ ताहि हांकि रथ तुरत परायो ॥ हरिसुत हँसि रथ भाजि बाजि इति कौतुक कीनो । क्रीट सुयोधन को उतारि सल्यहिं गहि लीनो ॥

प्रवर—यह तो हुआ, पर इसमें क्या युक्ति है ?

सल्यहिं तो गहि कै कियो कैद कन्दरा मांहि ।
क्रीटलेइ कुरुपति तज्यो तेहि गहि बांध्योनांहि॥

इन्द्र०—यह तो प्रत्यक्ष बात है !

कुरुपतिही सैनप अहै तेहि बांधे सब सैन ।
बिचलि भाजिहै सहमि कै अरु ह्वै महा अचैन॥
पै कुमार अस चहत नहि बल दरसावन काज ।
याही ते बांध्यो नहीं क्रीट उतारन व्याज ॥

(नेपथ्य में)

अरे बीरमानी प्रबीर निरखत कत ठाढ़े ।
अहो कहा चिन्तत सिगरे रावत रन गाढ़े ।
करत कहा को दण्ड लिये भूपति कुलमानी ।
रहत कहा कायर लौं सब सैनप रिस ठानी ॥

धावहु धावहु धरि लेहु गहि धीर टूम्भारि बल करहु। रथ तुरग मारथी बिसिख धनु दलि हरिसुत को मद हरहु॥

प्रवर—अमरेश! दुर्योधन की इस निर्लज्जता को देखिये जब अपने से कुछ न बन आयी, तो सेनपों को उत्ते-जित करने लगा।

इन्द्र०—कायरों की यही रीति है, किन्तु इसकी उत्तेजना करने का प्रभाव बड़ा हुआ—क्योंकि—

बीर जीते हुते भूप लैके तिते कृष्ण प्यारे सुतै घेरि लीने। सोर कीनो महाचाप चीनो महा जोम भीने तहां त्रास दीने॥ रोस सानै बने तेज तीखे घने बान मारे घने दाप शोने। जीत ईहा पगे बीरता में खगे जुद्ध जोधा जगे मान भीने॥

प्रवर॰—देव! इसमें सन्देह नहीं कि राजाओं ने अपार सेना से प्रद्युम्न को घेर लिया, किन्तु प्रद्युम्न का असीम साहस इस समय भी वैसाही अनिवार्य है।

यदपि चार जोजन को घेरो करि दल छायो।
व्यूह बाँधि अस, संगसि बायु जहँ जानन पायो॥

सकल सुभट नृप सिमिटि सैन के आगे आये। तुरग हस्ति रन कुशल चमू चहुँदिस बगराये॥ भर लाइ सबै असि परिघ सर सिंह सरिस गरजत खरे। पै तदपि हरिसुअन धनु धुनत धँसि मन्द हँसि नहिं टरे॥

इन्द्र—प्रवर। देखो।

दल मैं प्रबिसि हरितात तानि कमान को अजगुत कियो। करि छिन्न भिन्न अनेक भट बहुतेक बीरन दलि दियो॥ क्रीटरु कवच को काटि सूत निपाति सूर अनेक को। मद मोरि दरि अभिमान दीनो समन कीनो टेक को॥

प्रवर—वाहवा! कुमार! वाहवा!!

जिमि अपार मृग जूह बीच केहरि गति धारै। जिमि अहिगन मैं नभगनाथ कौतुक बिस्तारै॥ तृन समूह पै अग्नि राशि जिमि जोम जनावै। दिवसनाथ तम तोम नासि जिमि तेज बढ़ावै॥ तिमि निरखि अमित नृप संकुलित सैन माँहि तव अगम गति। उमगत मन मोदित ह्वै महा अरु प्रमुग्ध ह्वै रहत मति॥

अर्थ० – महाशय ! कुमार का अद्भुत पराक्रम निस्सन्देह प्रशंसनीय है।

जोजन भर को करि घेरो रथ भ्रमत लखावै।
रोमरोम ते तजत बिसिख हरि तात अनावै॥
एक बान जो कोउ दिसि ते हरिसुत पै आवै।
तानु तीन सर धार बैरि सुतादि नसावै॥
चकि चौंकि चौंकि अति भट भजत भभरि भूरि अरु थरहरत। जब सम्बरारि संगर सबल माया ते ढिग संचरत॥

इन्द्र – प्रिय पुत्र ! तुम शीघ्र हाथ में धन्वा बाण लेकर हम लोगों की रक्षा करो। क्योंकि –

सूत तुरग हरि तात रोम रोमन अरु रथ ते।
निकसत बहु सरबृन्द भारत कै उडुगन पथ ते॥
किधौं धरा प्रति छिद्रन ते सर निकरत आवत
किधौं ककुभ ते निकरि शिलीमुख को गन धावत॥ जाते जल थल अरु गगन चर जीव जन्तु कटि कटि परत। सोइ गति ह्वै है हम सबन की जौ न बान धनु तुम धरत॥

अयं० – जैसी पूज्यपाद की आज्ञा। (धन्वा बाण ग्रहण और सन्धान)।

प्रवर – देव! आपने बहुत अच्छी युक्ति सोची, नहीं तो इसमें सन्देह नहीं कि हमलोगों का यहां ठहरना कठिन हो जाता।

नैन उठावत नैन माहि द्रुत सर परि जावै।
भुजा सस्त्र के सहित उठत काटि भू पै आवै॥
जलचर सरभय धारि अगाध उदक तकि धावै।
नभचर उड़िबो त्यागि सहमि गिरिगुहा समावैं॥
जगजीवैं अमित इमि जोहियत जहँ तहँ व्यथितरु बिकल। हम सब फिर अब हरितात के तजित बिसिख ते लहत कल॥

इन्द्र – मित्र! देखो।

फनि समान फुंकरत सौंह कोउ सर आवत।
गज पदाति की पाँति भेदि कोउ नभ धावत॥
काटि बाहु अरु सीस ता सहित कोउ इत दौरै।
लपटि आँत सों रुधिर भरे आवत ढिग औरै॥
तिमि काक कंक औ जूह को भेदि आनि कोउ

गिरत। पै करि लाघवता सबन दलि मम प्रिय सुत रच्छा करत॥

जयं०—पूज्यचरण! तनिक रणभूमि की ओर दृष्टिपात कीजिये।

सहसन सुभट कटि परत सहसन मारमार उचारहीं। बिनु नासिका दृग श्रवन ह्वै सहसन सभीत चिकारहीं॥ कटि गये दोऊ भुजनहूं सहसन लरत अरु परत हैं। बिन सीस ह्वै कै बैरि हित सहसन बिसिख धनु धरत हैं॥

अहा! यह देखिये!

अच्छ स्रौन मुख आदि ढेर जहँ तहँ दरसावै।
रुधिर मेद अरु मांस फैलि मन घिन उपजावै॥
कर कबन्ध करबाल गहे इत सों उत घूमहिं।
गिरत लोथ पर लोथ सीस कटिकटि भुव चूमहिं॥

प्रव०—देवेश! रणभूमि इस समय निस्सन्देह दर्शनीय है!

जहाँ तहाँ अपार दन्ति सुण्ड दन्त खोय कै।
भमैं जिन्हैं लखि भजैं अधीर भीरु होय कै॥
तुरंग जूह बान के लगे बिहाय चाल को।
खरे रहैं जकेति जीव ज्यौं बिलोकि ब्याल को॥

ध्वजादि सारथी रथी बिहीन चूर चूर ह्वै ।
अनेक यात हैं परे कितेक धूर पूर ह्वै ॥

और भी

खोपरीन भरि स्रौन पान कै नचत कराली ।
पोय मुण्ड को माल रुधिर पोतत बपु शाली ॥
भूत प्रेत बैताल मेद पूरित पल खाई ।
क्रीड़त कन्दुक मुण्ड और पग दण्ड बनाई ॥
बहु काक कंक बल हित लपकि बान खाइ द्रुत कटि परत । अरु उड़त मांस लै अमित नभ पै तहांति लरि पुनि गिरत ॥

इन्द्र०—मित्र ! रणभूमि क्या यह तो एक सुबृहत ताल है।

कोसन लौं जो भरो रुधिर सोई जल मानो ।
मृतक अश्व गज जूह नक्र मकरादि पछानो ॥
दीरघ लघु सफरीस मान पग कर जकटे कर ।
कंसजाल सेवाल इगादिक अपर उदक चर ॥
जहँ तहँ अनेक भट जोहियत रुधिर मांहि अतिहीं भरे । सो मनहु समर भूताल में न्हात अमित मानव खरे ॥

(रणभूमि की ओर देख कर)

किधौं मेदिनी मांग मांहि सेंदुर को टीकौ ।
किधौं बहत रजतल प्रवाह गेरू को नीको ॥
किधौं कालिका रुधिरपान हित जीह पसार्‌यो।
किधौं रक्तनद कोउ सैल ते निकरि पधार्‌यो ॥
रवि हनित प्रात असुरन किधौं क्षतज धार महि बसि रही । हरि औध किधौं रनभूमि मैं सिमिटि रुधिरधारा बही ॥

जयं॰ - पिता जी ! देखिये ! इस समय कैसा घोर युद्ध हो रहा है !

झड़ाक चाप तानि कै तड़ाक पैंतरे फिरे ।
सड़ाक सैहथी हतं पड़ाक सूरमे गिरे ॥
भड़ाक फूटियो सिरं धड़ाक बान को सहा ।
खड़ाक खोल उत्तरी कड़ाक शब्द कै महा ॥

और भी

तागिड़दं तीरं छागिड़दं छुट्टे ।
बागिड़दं बीरं लागिड़दं लुट्टे ॥
कागिड़दं कोपे जागिड़दं ज्वानं ।
मागिड़दं मारे बागिड़दं बानं ॥

नागिड़दं नच्चे भागिड़दं भूतं ।
हागिड़दं हस्से पागिड़दं प्रेतं ॥
जागिड़दं युद्धे सागिड़दं सूरं ।
घागिड़दं घूमीं हागिड़दं हूरं ॥

इन्द्र०—पुत्र! निस्सन्देह इस समय बड़ा घोरयुद्ध होरहा है।

क्रणणण कोपे । चृणणण चोपे ।
सृणणण सूरं । पृणणण पूरं ।
नृणणण नासे । खृणणण खासे ।
जृणणण जोधे । क्रणणण क्रोधे ।
तृणणण तीरं । बृणणण बीरं ।
मृणणण मारे । टृणणण टारे ।
क्रिणणण कुट्टे । लृणणण लुट्टे ।
बृणणण बानं । ज्रिणणण ज्वानं ।

और भी

टरे कोल कच्छं । लरे बीर दच्छं ।
डरे लोक लोकं । भरे सर्ब सोकं ।
चमक्के कृपानं । कड़क्के कमानं ।
तड़क्के तुफंगं । सड़क्के अभंगं ।

कहूं बीर जुट्टे । कहूं बान छुट्टे ।
कहूं सूर गज्जे । कहूं डंक बज्जे ।
मसक्कैत धाकं । धसक्कैत नाकं ।
जहक्कैत ज्वानं । बहक्कैत बानं ।

प्रव० – देव ! बस कीजिये, रण के विषय में मैं भी कुछ कहना चाहता हूं।

बहकन्त बीरं । फहकन्त तीरं ।
ढमकन्त ढोलं । बमकन्त गोलं ।
बहकन्त काकं । ववकन्त बाकं ।
तमकन्त सूरं । चमकन्त छूरं ।
हरतन्त मानं । हरतन्त सानं ।
काटतन्त अंगं । तजतन्त संगं ।
भरतन्त द्रोहं । करतन्त कोहं ।
लगतन्त बानं । भजतन्त ज्वानं ।

और भी

कि बज्जेत बाजं । कि सज्जेत साजं ।
कि नच्चेत उद्धं । कि मच्चेत युद्धं ।
कि जुज्झन्त ज्वानं । कि लुजझन्त प्रानं ।

कि भुजभ्भन्त हीसं । कि बुज्झन्त रोसं ।
कि पच्चेत मानं । कि खच्चेत बानं ।
कि लज्जेत जोधे । कि गज्जेत क्रोधे ।
कि फुट्टन्त संगं । कि कुट्टन्त अंगं ।
कि तुट्टन्त तीरं । कि जुट्टन्त बीरं ।

इन्द्र०—मित्र ! कुमार प्रद्युम्न का युद्ध देख हमलोगों को कौतुक हो रहा है किन्तु इससे संपूर्ण संसार सभीत है।

शिव समाधि भो भंग विधाता व्यस्त लखावैं ।
जच्छ रच्छ गन्धर्व देव मुनि जकित जनावैं ।
कच्छ कोल दिग्गज अहीस डिग्गत दरसाहीं ।
उथलत पुहुमी बार बार गिरि सकल हलाहीं ।
उच्छलत बारि बारिधि बिचलि टूटि टूटि तारे गिरत । रवि अरुन छत्रपति भूलि पथ गगन-माहिं भटकत फिरत ॥

प्रव०—ठीक है, पर अपसराओं के आनन्द की तो सीमा नहीं हैं।

रन सोहैं लरि मुदित बीर जो निज तन त्यागैं।
लिये हाथ जैमाल तासु हित कोउ अनुरागैं ॥

कोउ ताको हियलाइ मोद मढ़ि पुलकित होवैं।
कोउ बरि लहि मनकाम बाट निजगृहकी जोवैं॥
कोउ लरत एक सों एक हित कोउ बीचहिं तेंहि लै भजत। कोउ करि कामना अनेक उर आभूषन अंगन सजत॥

जयं०—महाशय! इस समय दोही की तो बन आई है।

कै आमिष भोजीन की भूमण्डल के मांहि।
कै बर नाकनटीन की नाकलोक के पांहि॥

प्रव०—देव! यद्यपि चारणों के यशोच्चारण, बन्दियों के बिरदप्रसारण, कड़खैतों की कड़क, रणबाद्यों की तड़क, नगाड़ों की गरज, और शंखों की तरज, का यह प्रभाव हुआ कि लाखों सूर, बीरगति को प्राप्त हुये, यहां तक कि अनेक कायर भी कट मरे, तथापि रणभूमि सूरसामन्तों से भरी है, किन्तु अब संपूर्ण राजाओं को विशेष क्रोध हुआ है।

दन्तबक्र, सिसुपाल, जरासुत, रुक्म, बिदूरथ।
साल, बिन्द, अनुबिन्द, नील, भगदत्त, जयद्रथ॥
द्रुपद, सुसरमा, धृष्टद्युम्न, उत्तर, दुस्सासन।
ए प्रबीर सँग, सकुनि, बिराट, कुरुप, सतआतन॥

तिमि सोमदत्त, पुरुजित, जुधामन्यु, भोज, उत
भोज, मन। बरे बाह्लीक, भूरिश्रवा, चेकितान
कासीस गन ॥

कुन्त सैब अरु धृष्टध्वज* आदि अपर महिनाथ।
वृत्ताकार सुव्यूह रचि घेरि लियो रतिनाथ+ ॥

इन्द्र- मित्र! तो अब क्या होगा?

प्रव॰—होगा क्या, यद्यपि राजाओं ने प्रलय का ठाठ किया है। अर्थात्

कोउ सहस कोऊ लच्छ कोउ कोटिन शिली-
मुख डारहीं। कोउ रुद्र कोऊ ब्रह्म कोऊ विष्णु
बान प्रहारहीं॥ कोउ मुसल मुग्दर मारि चक्र
चलाइ सांगन हनत हैं। कोउ बिरचि माया
कपट खानिक बिबिध बानिक बनत हैं॥

तथापि

करि कौसल प्रति नृपन सों करत युद्ध हरितात।
हनितसकलसस्त्रास्त्रदलि तिमिबिदारिअरिगात॥

जयं॰—महाशय! देखिये!

* धृष्टध्वज = धृष्टकेतु। + रतिनाथ = कामावतार कुमार प्रद्युम्न।

बिदारि व्यूह चाप काटि अस्त्र शस्त्र दूर कै ।
निपाति सारथी रु बाजि स्यन्दनादि चूर कै ॥
लगाइ घाव अंग अंग बेधि रोम रोम को ।
कियो कुमारु भीरु औ अधीर भूप तोम को ॥

इन्द्र -- भद्र ! फिर अब विजय होने मे क्या विलंब है ।

प्रव० -- देव ! अब कुछ विलंब नहीं है ।

(नेपथ्य में)

परम सुभट सब भांति बडे ह्वै बीर कहाई ।
निज लघु पै रिस करब महा अनुचित दरसाई ॥
याते कत समुहाइ बरकि हमसों तुम माड़त ।
चले जाहु हठ त्यागि धाम मातुल हम छाड़त ॥

प्रव० -- अमरेश ! आपने सुना, कुमार प्रद्युम्न ने निज मातुल रुक्म को कैसा उत्तम परामर्श दिया है ।

इन्द्र -- निस्सन्देह ! पर इस परामर्श का प्रत्येक अक्षर उस के क्रोधाग्नि के लिये घृत से भी बढ़कर है ।

(पुनः नेपथ्य में)

बृद्धन बांधि कहा इतो अरे मूढ़ गरबात ।
मिल्यो तोहि नहिं कोउ सुभट पै अब मैं समुहात

इन्द्र -- प्रवर ! रुक्म की बातों को सुना ।

प्रव०—सुना, यदि ऐसे न होते तो बार बार दुर्गति क्यों होती ।

जयं०--पूज्यचरण ! आप देखें !

भगदत्त बारन सीस पै रथ को उड़ाइ सिवारि गो । दलि'चाप चर्मादिक पकरि तेहि कन्दरा मैं डारि गो ॥ पुनि रुक्म औ सिसुपाल तजि तजि सूल सायक टारि कै। सूतादि हनि तिनको गह्यो गर कपट फांसी डारि कै ॥ रथ छोरि नभ मों आइ कूदि सकुनि रथोपरि हँकरिकै । कच मिथः बांध्यो तेहि सदुस्सासन सभातनपकरि कै ॥ तिमि मध्य मैं कर मैं समीप छुटत विदलि सर जाल को। अरु अस्त्र शस्त्रन नासि गहि बाँध्यो सकल भूपाल को॥ कुरुराज को कुरुपति बिचारि बिनाहि बांधे गहि लियो। अरु सकल नृपगन सहित ताको कैद कन्दर में कियो ॥

प्रव०—तो क्या कुमार प्रद्युम्न की जीत हो गई ?

जयं०—महाशय ! आप देखते नहीं !

जिते जगद्विजयी नृपाल रनहित ह्वै आये
तिनै जीति गहि बांधि गुहा में हरिसुत नाये॥
धीर बीर सीमन्त सूर रावत हैं जेते ।
करि कठोर घमसान बीरगति गमने तेते ॥
अस निरखि बची सैना भजीं तजि तन सुधि
तिमि बसन धन। कोउ नहिं दरसत रनभूमि
अब अपर त्यागि बहु मृतक जन ॥

इन्द्र—मित्र! कुमति भी कैसी आपदा है! इसी के कारण राजाओं की आज यह दशा हुई है।

व्यर्थ बैर हरि सों बेसहि ह्वै असैन लहि चोट।
अखिल अँधेरी गुहा मैं अब भोगत दुख कोट॥

प्रव॰ अमरेश! यह तो उचितही है, क्योंकि—

अनुचितउचितनजोलखत मतिउजास मदकाय।
सो तमसावृत अरि गुहा परि दुख लहै बनाय॥

जयं॰ (सामने देखकर) महोदय! रथ को त्याग बाम हस्त में माया बन्धन लिये, कुमार प्रद्युम्न अब कहां जा रहे हैं?

प्रव॰—आयुष्मन्! ज्ञात होता है रणभूमि के अन्तिम भागस्थ पर्वत की उस कन्दरा के रक्षक कर्ण को दण्ड देने के लिये, जिसमें समस्त यदुबंशीबद्ध हैं।

(नेपथ्य में)

अरे सूतसुत चम्प गहि कहा हनत सर मोहि ।
बिना गहे आयुध कोऊ मैं गहि लैहौं तोहि ॥

इन्द्र—(सुन कर) मंत्रिबर ! कुमार प्रद्युम्न ने कैसी कठिन प्रतिज्ञा की है, क्या कर्ण के सन्मुख यह सफल हो सकती है ?

प्रव०—देवेश ! आप के इतना कहतेही कि "सफल हो सकती है" वह सफल हो गई ।

जदपि सो ढिग सों कुमार समीप लों तजि बान को । रचि बिसिखपंजर पूरि दीनो गगन और दिसान को ॥ पै तदपि जिमि महि छिद्र पथ ह्वै वायु की गति होत है । अरु निबिड़ घन मैं धँसत दामिनि करि अपार उदोत है । तिमि प्रबिसि तामैं कृष्णसुत निज ओप को सौगुन कियो । चकचौंधि रबिसुत चाप तजि चकि तोपि चख कर सों लियो ॥ तब पद प्रहारि गिराइ झोटहिं पकरि केस समूह को । तेहि कैद कीनो कन्दरा मैं छोरि जदु धन जूह को ॥

इन्द्र०—मित्र! ऐसा अद्भुत पराक्रम काहे को किसी का होगा, जैसा कि कुमार प्रद्युम्न का है।

सहसन महा महारथी रथी अतिरथी कांहिं ।
त्यागि कृष्णसुत को सकत जीति है घटी मांहिं॥

प्रवर—देव! जब कुमार प्रद्युम्न का ऐसा अद्भुत पराक्रम है तभी तो हमलोग आज रणकौतुक देख कर अघा गये! नहीं तो

देखिहूं आहव अमित रही चाह चित ऐन ।
पै बिलोकि हरितात को युद्ध अघाने नैन ॥

जयं०—महाशय। केवल हमीलोग नहीं अघा गये, कुमार के अदभुत पराक्रम ने अनेकों को अघा दिया।

सूरता समर कै अघानी जूह सूरन को भूपति अघाने बान बेर बेर धरि कै। काक कंक कूकर अघाने मांस मेद खाइ कालिका अघानी पान स्रोनित को करि कै॥ हरिऔध भूपत अघाने पाइ मुण्डमाल अतिही अघाने बीर बारबार लरि कै। बन्दीजन बिरद बखानि कै अघाने आज देवन की अंगना अघानी बीर बरि कै॥

(रथारूढ़ सारथी सहित कुमार प्रद्युम्न का प्रवेश)

इन्द्र० – मित्र ! सम्प्रतीयकृत्य का अब शेष हो गया, और अघाने उपरान्त बिश्राम भी आवश्यक है, अतएव चलो चलें !

प्रवर – बहुत उत्तम, चलिये ।

(तीनों जाते हैं)

सार० – कुमार ! ऐसे उत्‌कट संग्राम में आप की बिजय और आप के एवं अपने शरीर को बिना व्रण देख कर इस समय मुझ को परमानन्द प्राप्त है ।

प्रद्यु० – सूत ! मुझको इन बातों का उतना हर्ष है वा नहीं है, जितना भक्त मानसरहंस महात्मा भीष्म और ब्राह्मणवंशावतंस श्रीयुत कृपाचार्य वो द्रोणाचार्य को अपने हाथों से बांधने का खेद है ।

सार० – कुमार ! खेद का कोई स्थल नहीं है, क्योंकि क्षत्रिय धर्मही महाकठोर है !

पिता पूज्य गुरु भ्रातहूं पाइ सौंह रनमांहि ।
जे सकाहिं ह्वै छत्रिसुत ते पामर कहलाहिं ॥

प्रद्यु० – यदि खेद का स्थल नहीं है तो हर्ष का अवसर भी नहीं है क्योंकि पूर्ववर्णित अयोग्य कार्य के अतिरिक्त और भी कतिपय अनुचित कर्म हुये हैं ।

कमल सरिस कोमल कबौं न जिन बन्धन पायो।
भूपन के तिन हस्त पाद हम सृङ्खल नायो ॥
सुमनसेज पै सैन समय कल जिनैं न आयो ।
तिनैं कन्दरा माहिं कठिन भू पै हम स्वायो ॥
जिन नृपनसीस सोहत हुतो कलित क्रीट बर
बसन तन । तिन क्रीट काटि हरि बसन हम
करि दीनो रन मैं नगन ॥

सूत० — कुमार ! राजाओं की इस दुर्गति का कारण उनका यह अभिमान है कि "यदि हमलोग श्रीकृष्ण को एकाकी नहीं जीत सकते तो आज सब कोई मिल कर उनको जीत लेंगे, जिससे चिरसंचित बैर निर्यातन का हमलोगों को अवसर हस्तगत होगा" किन्तु

बिना लखिई हेत के बँहकि जोय गरबात ।
सो घटाय निजमान को बिना सिद्धि रहि जात॥
उठहिं बलूले उदक में बिना हेत मद काय ।
याही ते बिनसत रहत बनि तिनको समुदाय॥

(नेपथ्य में)

खल निकुम्भ हरिसर ते पीड़ित ह्वै नभ आयो।
यहां देखि कै हम सबको मन मैं दुख पायो ॥

गदा तानि कै ताकि प्रवर को बल सों मास्यो।
जाकी लगत सकौड़ सो सपदि निजबल हास्यो॥
अब ह्वै मुरछित भेदत पवन सो दिखात भू मैं
गिरत। तुम तात लोकि कै मध्य ते करहु तासु
रच्छा तुरत ॥

(दोनों सुनते हैं)

सा० – कुमार। क्या यह सुरराज निजप्रियपुत्र को प्रवर की रच्छा का निदेश दे रहे हैं?

प्रद्यु० – हां हां! ज्ञात होता है कि जबतक निकुंभ ने प्रवर पर गदा का प्रहार किया तभी तक पूज्यपाद पिता के शरजाल वहां तक पहुंच गये जिस कारण वह पुनः पृथ्वी में पलट आया, नहीं तो इन्द्र कब इस निस्शङ्कता से निदेश दे सकते थे।

सार० – सत्य है।

उदभटता निस्शङ्कता बीरतादि रनचाव ।
द्विज अरु देवन में रहत इनको सदा अभाव ॥

(पुनः नेपथ्य में)

धन्य पुत्र! धन्य!!

केवल तुम नहिं प्रवर को दियो प्रान को दान।
कियो गदाहू असुर को चूर मारि बहु बान ॥

सार० – (सुन कर) क्या बात है ! इस अवसर में जब कि वह –

हरिसर ते पीड़ितहुतो आवत पुहुमी ओर ।
तासु गदा को काटिबो है बीरता न थोर ॥

प्रद्यु० – क्यों नहीं, उनके लिये यही बड़ी बीरता है !

सार० – कुमार ! न जाने किस मुहूर्त में महात्मा ब्रह्मदत्त ने इस यज्ञ का संकल्प किया था, कि जिसके कारण सम्पूर्ण संसार * एक बार अस्तव्यस्त हो गया।

प्रद्यु० – सूत ! यह कुछ नई बात नहीं है ! प्रजापति दक्ष के यज्ञ में भी तो ऐसाही हुआ था।

सार – (सामने देखकर) कुमार ! तनिक सामने देखिये !

बिकसितबदन प्रफुल्लनैन मुसकात मनोहर ।
नीलसरोरुह सितसरोजदलसम अति सुन्दर ।
मन्द मन्द पग धरत मैन को मान नसावत ।
नैनन को सुख देत मोद मन मैं उपजावत ॥
घनकृत-सरीर आमोदरत बपु सनाह सोभन धरे ।
श्रीहरि श्रीरेवतीपति आवत इत आनँद भरे ॥

* यहां उपमा का एक अंग अर्थात् संसार का अस्त व्यस्त होना मात्र लिया गया है।

प्रद्यु० –(देखकर) क्या पूज्यपाद पिता व पितृव्य इतना सन्निकट आ गये ? तो हमको भी रथ से अब उतरना उचित है (रथ पर से उतर पड़ते हैं)

(बलरामजी के साथ भगवान श्रीकृष्ण का प्रवेश)

श्रीबल०—(आगे देखकर) यदुकुलेश ! तनिक कुमार के मुख की शोभा को (जो इसी ओर आ रहा है) अवलोकन कीजिये !

नीलम पै हरिऔध ज्यों लाल कनी अरु हीरक के कन छाजैं । इन्द्रवधू की पांति औ जीवन*के कन नीलशिला जिमि भ्राजैं ॥ नीलसरोरुह मैं जिमि रक्त पराग औ ओम के बुन्द बिराजैं । त्योंही कुमार के आनन पै श्रमबिन्दु औ सोनित के कन राजें ॥

श्रीकृ०—मान्यवर ! आपने कुमार की शारीरिक शोभा का वर्णन किया है किन्तु मैं उसको उस शोभा को देख रहा हूं जो आपकी कृपा (अर्थात् विजय) से उसको प्राप्त हुई है ।

बिथुरी अलक समूहन पै रजकन दरसाहीं ।
सो जनु अरि की अमित सैन के भाव जनाहीं॥

* जीवन अर्थात् जल । जीवन = जल ।

मुख पै श्रमकन सहित ओप की पुंज लखावै।
मानहु कृत श्रम चिन्ह संग हिय मोद सुहावै॥
तनतेज कवच धृत छिद्रपथ ह्वै अपार नि-
कस्यो परत । सो मनहुं बिजय को जोति को
जूह निकरि जग जस भरत॥

(अति निकट पहुंचकर कुमार प्रद्युम्न दोनोंजन को प्रणाम करते हैं)

दोनों ज०—(आशीर्बाद देकर) प्यार से, आओ पुत्र ! !! आओ ! ! ! आज तुमारे अद्भुत पराक्रम ने हमलोगों को चमत्कृत कर दिया।

यद्दपि निकुंभक हम दोऊ करत हुते रन घोर।
तजिकै तनकी सकल सुधि औ करिरोस अथोर॥
पै बिलोकि तव जुद्ध को गयो भूलि निज जंग।
केवल खरे लखत हुते तौ रन, दानव संग॥

कुमा०—(नम्रता से) यह केवल आपलोगों के चरणों की सेवा का फल और आपलोगों की कृपा का बल है।

जाकी भृकुटि बिलास ते नसत सकल संसार।
दिग्गजहूं को दलि सकत पाइ सक्ति जेहि स्यार॥
मधुकैटभ कनकाच्छ मुर सहज कियो जिन नास
केवल ताकी कृपा ते कियो इतो यह दास॥

श्रीबल०—मेरे प्रिय पुत्र ! तुमको यही कहना शोभा देता है, परन्तु तुमारा पराक्रम अलौकिक और अपूर्व है।

मिलि हम मुरारिन भये एक निकुंभ पै रन मैं जयी। पै भाजि सो षटपुर गुहा मैं दुरयो कछु ऐसी भयी॥ तहँ जाइकै कैसेहुं श्रीयदुबीर ने ताको हन्यो। पै तुम अकेले लरि सुभट कोटिन बिदलि जग जस तन्यो॥

प्रद्यु०—पूज्यचरण! आपका यह कथन केवल मेरा उत्साह बढ़ाने के लिये है, नहीं तो—

कहँ बटेर कहँ नभगपति कहँ लघुअहि कहँसेस।
कहां एक पामर किरिम कहँ व्यापक अखिलेस॥

श्रीकृ०—पुत्र! यह तो हुआ, पर बदला चुका लेने उपरान्त भी अब राजाओं को क्यों बाँध रक्खा है?।

यदुवंसिन का गहि कियो असुर दरी मैं बन्द।
ताको बदलो तुम लियो नृपत बांधि लै फन्द॥
बिना लिये बदलो तजहिं जे जग सुजन कहांहिं
तुम बदलोहू लै तजत क्यों न तात तिनकांहिं॥

प्रद्यु०—पूज्यपाद! बदला तो निस्सन्देह हुआ, पर उन लोगों का गर्व अब तक न शमन हुआ होगा अतएव—

हम चाहत ऐमहिं बँधे तिनैं पुरी लै जाय।
अति लज्जित अरु दीन करि त्यागहिं गर्व नसाय

श्रीबल० – तात ! प्रथम तो इस बात की आशाही नहीं है कि उनका गर्व अब तक शमन न हुआ हो, और यदि मान लिया जावे कि नहीं शमन हुआ है तौभी कोई चिन्ता नहीं, क्योंकि –

प्रथम गर्व करि का कियो अब करि लैहैं काह।
याते तात तजहु तिनैं ह्वै असंक सउमाह ॥

श्रीकृ० - पुत्र ! यतः मान्यवर श्रीबलरामजी की भी यही अनुमति है अतएव तुम जाओ और षटपुर में जहां सहाग्रज हम चलते हैं समस्त राजाओं को लेकर शीघ्र आओ।

हम तहां तिनको बसन भूषन सैन हय गज जान को। बहु देहिंगे जाते सुखित सो जाहिंगे निज थान को॥ दै राज षटपुर को सचीपति सचिव प्रबर प्रबीर को । अरु देहु कै तहँ को बिभव सब धनंजै रनधीर को॥ तिमि देहु यदु-बंसिन निकुंभसुता बिसिख सतमान सों। रिषि यज्ञपूरि पितादि लै सँग चलहिंगे हम आन सों॥

प्रद्यु० – जैसी पूज्यपाद की आज्ञा !

(जाना चाहते हैं)

श्रीकृ॰व श्रीबल॰—प्रिय पुत्र! इतना शीघ्र और ऐसी प्रसन्नता से तुमने जो हमलोगों की इस आज्ञा को मान लिया है, अतएव हमलोग तुम को यह आशीर्वाद देते हैं।

रहै सदा तुम रोमनालि हरिपदपंकजरत।
गोद्विज देव स्वधर्म प्रीति होवै दृढ़ सन्तत॥
परतिय पै कबहूं न भूलि चित चंचल होवै।
नीति सदा प्रिय होय ज्ञान को पथ हिय जोवै॥
रनमांहि अटल गति होय तव सर्वदैव अरि
जित रहैं। सुखसों चिरायु ह्वै निरुज रहि प्रान
तिहारे प्रन बहैं॥

प्रद्यु॰—महामान्यवर! यतः आपलोगों का आशीर्वाद त्रिकाल सत्य है अतएव मैं इस बरदान की भी याचना करता हूं।

"सन्धिः सर्वमहीभुजां विजयिनामस्तु प्रमोदः सदा। सन्तः सन्तु निरापदः सुकृतिनां कीर्तिश्चिरं वर्द्धताम्॥ नीतिर्वारविलासिनीव सततं वक्षस्थले संस्थिता। वक्त्रं चुम्बतु मन्त्रिणामहरहर्भूयान् महानुत्सवः"॥

रो॰ज॰—तथास्तु।

(सब लोग चले जाते हैं)

इति।